International Journal of Humanities and Social Science Invention (IJHSSI)
ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714
www.ijhssi.org ||Volume 4 Issue 3 || March 2015 || PP 63-66

आधुनिक भारत में दलितोत्थान और पूना पैक्ट: एक अध्ययन

डॉ. आलोक कुमार

एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास विभाग, डॉ0 शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय, लखनऊ

भारत में दलितोत्थान एक सामाजिक चुनौती के रूप में आधुनकि युग की ही समस्या नहीं है बल्कि प्राचीनकाल से ही समाज में यह चुनौती मौजूद रही है। प्राचीन भारत में विकसित वर्ण और जाति व्यवस्था ने समाज के एक बड़े वर्ग को अमानवीय जीवन जीने को बाध्य कर दिया था जिसके विरूद्ध समय-समय पर समाज सुधार आन्दोलन चले।

ऐतिहासिक युग में सर्वप्रथम गौतम बुद्ध ने सुधारवादी आन्दोलन चलाया जिसमें समानता की बात की और जाति व्यवस्था पर कुठाराघात किया। विभिन्न प्रयासों के बावजूद भी वे अस्पृश्यता को समाप्त करने में सफल न हो सके। मध्य युग में स्वयं अस्पृश्यों में प्रतिक्रिया आरम्भ हुई। निम्न जातियों के अनेक रहस्यवादी सन्तों ने जिसमें कबीर, रैदास, दादू, नानक आदि उल्लेखनीय हैं। इन्होंने अपनी लेखनी के माध्यम से जन-जन तक अपनी आवाजों को पहुँचाने का प्रयास किया। ये सन्त जिस प्रकार के समाज की कल्पना करते थे वैसा समाज बनाने में वे भी सफल नहीं हो पाये।

आधुनिक भारत में ईसाई मिशनरियों के आते ही दलितों के बीच हलचल सी हुई क्योंकि उन्होंने अपने स्वार्थ पूर्ति हेतु उनका इस्तेमाल किया। दलितों को शिक्षा, सुख, सुविधा के वचन के साथ ही उन्हें बाईबिल भी थमा दिया। वर्षों से शोषित अस्पृश्य समाज ने उनके विचारों को कृतज्ञता के साथ सुना व स्वीकार भी किया। 19वीं शताब्दी के सुधार आन्दोलन का आरम्भ हुआ किन्तु अछूतोद्धार आन्दोलन के प्रमुख प्रणेता स्वामी दयानन्द सरस्वती जी थे जिन्होंने सभी हिन्दुओं को वेद की ओर लौटने को कहा। उनका मानना था कि वर्तमान रीति-रिवाज कुछ स्वार्थ समूहों द्वारा बना लिये गये हैं जिसके परिणामस्वरूप ही शोषण की स्थिति उत्पन्न हुयी। अतः अब आवश्यकता है उन भ्रष्ट पौराणिक रिवाजों को त्याग कर वेदों के शुद्ध हिन्दू धर्म के पुनर्संगठन की। स्वामी दयानन्द के शिष्य श्रद्धानन्द ने "दलितोद्धार आन्दोलन" द्वारा इस क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया। स्वयं गाँधी जी का मानना था कि "स्वामी दयानन्द ने हमारे लिए जो अनेक मूल्यवान उत्तराधिकार छोड़े हैं उनकी अस्पृश्यता के विरुद्ध असंदिग्ध घोषणा निस्संदेह उनमें से एक है।[1] जातिगत भेदभावों व छूताछूत के विरुद्ध विभिन्न आन्दोलनों का एक उल्लेखनीय पक्ष है ब्राह्मण वर्चस्व का विरोध। महाराष्ट्र से लेकर लगभग सम्पूर्ण दक्षिण भारत में ब्राह्मण विरोध की लहर अधिक तीव्र रही। महाराष्ट्र में फुले ने "सत्य शोधक समाज" की स्थापना की जो जातीय भेदभाव एवं ब्राह्मण प्रभुता को खुली चुनौती थी। अनेक विरोधों के बावजूद उन्होंने पूना में अछूतों के लिए सर्वप्रथम विद्यालय की स्थापना की। अब्राह्मण आन्दोलन का चरम रूप तमिलनाडु में "द्रविड़ आन्दोलन" है। इन आन्दोलनों ने धीरे-धीरे देशव्यापी रूप ग्रहण कर लिया। वास्तव में राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान विभिन्न जातियों के लोगों ने देश की स्वतंत्रता के लिए एक दूसरे के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर संघर्ष किया। जिससे जातिगत भेदभाव की धारणा कमजोर हुई। बीसवीं सदी के दूसरे दशक तक राष्ट्रीय आन्दोलनों का नेतृत्व गाँधी के हाथ में आ गया। अस्पृश्यता उन्मूलन और हरिजन उत्थान को गाँधी जी ने राष्ट्रीय आन्दोलन का अभिन्न अंग बना दिया। हम जब भी दलित राजनीति व जागरूकता की बात करते हैं उसके पूर्व गाँधी व अम्बेडकर दोनों के विचार सामने आ जाते हैं। दोनों ने अपने-अपने तरीकों से दलित वर्ग उत्थान का प्रयत्न किया। उत्थान से सम्बन्धित दोनों के विचार एक दूसरे के विचारों से मेल नहीं खाते थे। दोनों के लक्ष्य एक थे किन्तु उसकी प्राप्ति के तरीके अलग-अलग थे। उसका कारण था महात्मा गाँधी का कोमल हृदय जो किसी भी शोषण व अत्याचार को सह नहीं पाता था। अतएव वे वर्षों से हो रहे शोषण को भारतीय हिन्दू समाज व्यवस्था से ही हटाना चाहते थे। डा० अम्बेडकर जो उस शोषण व अत्याचार के स्वयं पीड़ित हुये थे उनका पालन-पोषण उसी अपमान और घृणा की छत्र-छाया में हुआ था। उनके सोचने का तरीका अलग था। उनका

मानना था कि विचारों एवं कानून द्वारा जो भी परिवर्तन होगा वह समाज व धर्म पर लागू तब तक नहीं होगा जब तक वे व्यक्ति स्वयं न चाहे। सदियों से शोषण करते आ रहे व्यक्तियों की मानसिकता को बदलना आसान नहीं है। अतः वे हिन्दू समाज से ही अलग होने की बात करते थे। गाँधी का कहना था कि "जब तक हिन्दू अपने भाईयों के एक भाग को छूना पाप मानते रहेंगे स्वराज्य की प्राप्ति असम्भव रहेगी।"

अस्पृश्यता के विरुद्ध संघर्ष की अन्य कड़ी थे मालवीय, गाँधी एवं अम्बेडकर। मालवीय जी ने अस्पृश्यता को वैदिक रूप से मानने से इन्कार करते हुए सदैव अस्पृश्यता निवारण के कार्य क्षेत्र में डटे रहे। गाँधी ने अस्पृश्यता निवारण को राष्ट्रीय आन्दोलन का अनिवार्य अंग बनाकर उसके विरुद्ध जन-जन में अपने विचार को पहुँचाने व जागरूकता उत्पन्न करने का प्रयास किया। वे हृदय परिवर्तन के माध्यम से इस शोषण को समाप्त करना चाहते थे। डा० अम्बेडकर गाँधी के विचारों से सहमत नहीं थे। उनका कहना था कि "आत्म सहायता" से ही दलित अपनी जंजीरों को तोड़ सकते हैं। अस्पृश्यता के विरुद्ध गाँधी ने जो भी प्रयत्न किए उसके सीधे प्रहार से अस्पृश्यता की नींव हिल गयी। हिन्दू धर्म के अधिकांश अनुयायी अभी तक इन आन्दोलनों के विरुद्ध थे क्योंकि जो भी आन्दोलन हुए थे वे न्यूनाधिक मात्रा में सनातन हिन्दू धर्म के प्रति विद्रोहियों के माध्यम से हुए थे। गाँधी ने जो भी आवाज उठाई अपने को सनातनी हिन्दू मानते हुए उठाई।

गाँधी जी का मानना था कि "उच्चता और नीचता का विचार नैतिकता के सर्वाधिक प्रारम्भिक सिद्धान्तों के विरुद्ध है। एक ब्राह्मण जो अपने को भगवान के बनाए हुए एक भी प्राणि से उच्चतर मानता है, ब्रह्म का ज्ञाता नहीं रह जाता, शूद्रों के बारे में स्मृतियों में पाये जाने वाले श्लोक मानवता की आत्मा के विरोधी होने के कारण तुरन्त अस्वीकार कर दिए जाने योग्य है।[2]

गाँधी जी के अस्पृश्यता निवारण कार्यक्रम की सफलता का एक कारण यह भी था कि गाँधी दक्षिण अफ्रीका में स्वयं असमानता के अत्याचारों और अपमानों को सहकर आये थे। भारत में दलितों की वही स्थिति देखकर चुप वह नहीं रह सके। जैसा कि लुई फिशर का कहना है कि "यह कैसे हो सकता था कि दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों की समानता के लिए ताजी लड़ाई लड़कर आये गाँधी भारत में भारतीयों के द्वारा भारतीयों पर आरोपित निर्मम असमानता को देखकर चुप रह जाते।[3]

अस्पृश्यता के विरुद्ध आवाज उठाने वालों में अम्बेडकर का नाम भी उभर कर सामने आया। "अस्पृश्यता रूपी दैत्य के विरुद्ध संघर्ष करने वालों में अम्बेडकर का स्थान अद्वितीय है।[4] डा० अम्बेडकर जिन परिस्थितियों से गुजरे थे, वे विष के ऐसे कड़वे घूँट थे जिन्होंने उन्हें झकझोर दिया था। सम्पूर्ण दलित समाज के साथ शताब्दियों से भारतीय समाज जो अन्याय करता आया, उससे वे बहुत दुखी थे। उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन दलित वर्ग के उत्थान के लिए समर्पित कर दिया। बम्बई में जब तक अम्बेडकर रहे उन्होंने दलित जतियों के लिए कार्य किया। उन्हें संगठित करने का प्रयास किया। उनका मानना था कि "जब तक गैर ब्राह्मण तथा दलित जातियाँ ज्ञान और शक्ति सम्पन्न नहीं होंगी तब तक वो प्रगति नहीं कर सकतीं।" साथ ही उन्होंने यह कहने में भी संकोच नहीं किया कि स्वराज्य के संविधान में दलितों का मूल अधिकार शामिल किए जायें। डा० अम्बेडकर का राजनैतिक चिन्तन उनकी सामाजिक परिस्थितियों और दलित वर्ग की दशाओं से प्रभावित था। वे दलित वर्ग को अधिकारों के प्रति जागरूक करना चाहते थे। वे जाति प्रथा और छूआछूत को जड़ से मिटा देना चाहते थे। उस समय के हिन्दू सुधारकों में उन्हें विश्वास नहीं था। वे गाँधी के हृदय परिवर्तन की पद्धति में निहित मंद गामिता को सहन नहीं कर सके। इस प्रश्न पर उनका गाँधी से मतभेद भी था। वे समाज में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाना चाहते थे। डा० अम्बेडकर ने गाँधी के दलित वर्ग के प्रति प्रेम को राजनैतिक पाखण्ड बताया है। वास्तव में अम्बेडकर अस्पृश्य जातियों के कष्टों से इतने दुःखी थे कि वे गाँधी जैसे उदार व्यक्ति के अस्पृश्यता विरोध को भी शंका की दृष्टि से देखने लगे थे। जबकि भारतीय सामाजिक संरचना से उत्पन्न विकृतियों और समस्याओं की. ओर सर्वाधिक ध्यान देने वाले व्यक्ति के रूप में महात्मा गाँधी का नाम लिया जा सकता है, जिसने अस्पृश्य जातियों के अधिकारों के लिए निरन्तर संघर्ष किया। डा० अम्बेडकर भारतीय व्यवस्था में अस्पृश्यों को दी गई सुविधाओं से सन्तुष्ट नहीं थे इसलिए सम्भवतः वे उनके लिए पृथक चुनाव या अलग धर्म की बात करने लगे। 1919 में साउथ बारो समिति के समक्ष डा० अम्बेडकर ने जो बयान दिया, उसमें उन्होंने यह विचार रखा कि मुसलमान, सिख और ईसाईयों की तरह दलितों को भी हो रही आगामी भावी व्यवस्था में एक पृथक सम्प्रदाय के रूप में माना जाना चाहिए। वास्तव

में शासन तंत्र के विभिन्न स्तरों पर बनाई जाने वाली प्रतिनिधि परिषदों में अछूतों को प्रभावी स्वर उठा पाने के योग्य बनाने के लिए उनको अलग मतदाता वर्गों में मतदान का अधिकार दिया जाना चाहिए। यदि अछूतों एवं दलितों को ऐसा अधिकार नहीं दिया गया अथवा यदि उन्हें हिन्दू समाज क्षेत्रों में आरक्षित सीट के अलावा कुछ दूसरे तरीके से अधिकार नहीं दिया गया तो वे ऐसे प्रतिनिधि नहीं चुन पायेंगे जो उनकी आवाज उठा सकें। अगर हिन्दू समाज में आरक्षित कोटे से चुनकर आने वाला प्रतिनिधि भी उच्च जातियों के दबाव में ही रहेगा, भले ही वह दलित ही क्यों न हो, तो दलितों के लिए आवाज उठा पाना उनके लिए कठिन होगा।[5] इस प्रकार के गाँधी एवं अम्बेडकर के प्रतिरोधी विचारों का लाभ उठाते हुए तत्कालीन ब्रिटिश प्रधानमंत्री रैमसे मैकडोनल्ड ने एक साम्प्रदायिक पचांट तैयार कर दी।

1920 में साइमन आयोग भारत आया। सभी जगह इसका बहिष्कार किया गया। परन्तु कमीशन ने एक समिति बनायी, अम्बेडकर उसके एक सदस्य थे। 1930 में लंदन गोल-मेज सम्मेलन का बहिष्कार कांग्रेस ने किया किन्तु अम्बेडकर व श्रीनिवास वहाँ अछूतों के नेता बनकर गए। वहाँ अपने भाषण में उन्होंने अछूतों की बुरी स्थिति के साथ-साथ गाँधी व कांग्रेस की भी आलोचना की। 1931 में दूसरा गोल-मेज सम्मेलन बुलाया गया जिसमें गाँधी व अम्बेडकर उपस्थित थे। गाँधी अपने को राष्ट्रीय एवं अछूतों का नेता भी मानते थे किन्तु अम्बेडकर स्वयं को ही अछूतों का प्रतिनिधि मानते थे, गाँधी को नहीं। वे गाँधी व कांग्रेस को अछूतों का शत्रु कहते थे। साम्प्रदायिक समस्या उठ खड़ी हुई और आपसी मेल-जोल के अभाव में द्वितीय गोल-मेल सम्मेलन असफल रहा। 1932 में राजा मुंजे समझौता हुआ। अम्बेडकर उस समझौते व संयुक्त चुनाव के समर्थक नहीं थे। वे फिर लंदन गए जिससे कई अंग्रेज अधिकारी अम्बेडकर के पक्ष में हो गये।

गोल-मेज सम्मेलन में भारतीयों में कोई समझौता नहीं हो सका। अब ब्रिटिश सरकार ने अपनी ओर से साम्प्रदायिक निर्णय की घोषणा की जिसे साम्प्रदायिक पचांट कहा जाता है। इस पचांट के अनुसार अछूतों को अलग मतदान करने और प्रतिनिधि भेजने का अधिकार मिला। ऐसा ही अम्बेडकर चाहते थे अतः वे प्रसन्न हो गए। "किन्तु गाँधी को इस बात ने झकझोर कर रख दिया।[6] ब्रिटिश सरकार के साम्प्रदायिक निर्णय के कारण महात्मा गाँधी के आमरण अनशन के विस्मय भरे निश्चय ने भारत एवं विश्व को आशंकित कर डाला। गाँधी ने कहा कि 'हम हिन्दू सुधारकों का एक गुट हैं जो अस्पृश्यता के इस कलंक को मिटाने के लिए कृत संकल्प हैं। दलितों को एक पृथक वर्ग के रूप में हम नहीं देखना चाहते। मुसलमान, सिख, ईसाई तो दीर्घकाल तक इसी तरह रह सकते हैं किन्तु क्या अछूत चिरकाल तक अछूत ही रहेंगे? नहीं। अगर इसका विरोध मुझे अकेले भी करना पड़ा तो मैं अपने जीवन में इसका विरोध करूँगा।[7]

साम्प्रदायिक पचांट में विभिन्न निर्णयों के साथ एक निर्णय यह भी था कि हरिजन या दलित वर्गों को एक अलग अल्पमत माना जाए। यह इस पंचाट की सबसे घातक बात थी क्योंकि इसके द्वारा हरिजनों को हिन्दुओं से अलग करने की कोशिश की गई। हरिजनों को अलग चुनाव पद्धति द्वारा अपने प्रतिनिधि भेजने का अधिकार दिया गया। इसके अलावा उन्हें साधारण चुनाव क्षेत्रों में भी एक अतिरिक्त मत का अधिकार दिया गया। सरकार की इस योजना की पीछे की चाल को गाँधी जी भली-भांति समझते थे। उन्होंने कहा कि अस्पृश्यता को कायम रखने के सौदे पर वे स्वराज्य ही क्या दुनिया का राज्य लेना भी पसन्द नहीं करेंगे। द्वितीय गोल-मेल कान्फ्रेन्स में गाँधी जी की भूमिका की कटु आलोचना डॉ. अम्बेडकर ने की, वे गाँधी को दलितों का प्रतिनिधि नहीं मानते थे। उन्होंने गाँधी जी पर अस्पृश्यों के अधिकार हनन करने के लिए तथा मुसलमानों के साथ सांठ-गांठ करने का आरोप लगाया जिससे दलितों को पृथक निर्वाचन का अधिकार न मिल सके। अन्त में गाँधी ने अत्यन्त वेदना भरे शब्दों में कहा कि "अछूतों की ओर से पेश किया गया दावा मेरे लिए सबसे अधिक है। इसका अर्थ यह हुआ कि अस्पृश्यता का कलंक निरन्तर बना रहेगा। हम नहीं चाहते कि अस्पृश्यों का एक पृथक जाति के रूप में वर्गीकरण किया जाए। अस्पृश्यता जीवित रहे, इसकी अपेक्षा मैं यह अधिक अच्छा समझेंगा कि हिन्दू धर्म ही डूब जाए।[8]

साम्प्रदायिक पचांट के विरोध में गाँधी ने 20 सितम्बर, 1932 को आमरण व्रत आरम्भ कर दिया। डा० अम्बेडकर के साथ-साथ कई आलोचकों ने इसे बल पूर्वक अपनी माँगें मनवाने का तरीका बताया। परन्तु इसका अच्छा प्रभाव पड़ा।

इससे हिन्दू नेताओं को हरिजनों का मूल्य महसूस हुआ और गाँधी जी के आसन्न बलिदान ने हिन्दुओं के हृदय से सदियों से जमा हुआ अस्पृश्यता का मैल धो डाला। देश के नेताओं के समक्ष, गाँधी के प्राणों की रक्षा की चिंता के साथ ही यह प्रश्न था कि पृथक निर्वाचन का किस प्रकार अन्त किया जाए क्योंकि उसके हल किये जाने से ही गाँधी जी के प्राण बचाये जा सकते थे। ब्रिटिश प्रधानमंत्री स्वयं अपने निश्चय को तोड़ने वाले नहीं थे। अतः हिन्दुओं का आपसी समझौता ही एकमात्र उपाय था। मालवीय जी की प्रेरणा पर, हिन्दू और कांग्रेसी नेताओं की परिषद बुलाने का निश्चय किया। यह परिषद पहले बम्बई में आयोजित हुई जिसका स्थान बाद में पूना कर दिया गया। इसमें दलित वर्ग, कांग्रेस और हिन्दू सभा के नेता शामिल हुए। सबने मिलकर एक योजना तैयार की जिसे उपवास के पाँचवें दिन सभी दलों ने स्वीकार कर लिया। फलतः दलित जातियों ने पृथक निर्वाचन की मांग त्याग कर आम हिन्दू निर्वाचनों को ही स्वीकार कर लिया। हिन्दू और दलित वर्ग का यह समझौता कांग्रेस के इतिहास में "पूना पैक्ट" के नाम से प्रसिद्ध है। इस समझौते से दलित वर्ग सन्तुष्ट हो गया। प्रधानमंत्री के निश्चयानुसार उन्हें जितने जगहें मिलनी वाली थीं, अब उन्हें उनसे दुगनी मिल गयी और अपनी जनसंख्या से भी अधिक प्रतिनिधित्व उन्हें प्राप्त हो गया। 26 सितम्बर को यह समझौता ब्रिटिश मंत्रिमण्डल ने भी स्वीकार कर लिया। यह गाँधी के उद्देश्य की विजय थी। इस समझौते से गाँधी और अम्बेडकर के साथ अन्य लोग भी सन्तुष्ट हुए। किन्तु संघर्षों का सिलसिला निरन्तर चलता रहा। 1935 में सम्पूर्ण भारत को चकित करते हुए अम्बेडकर ने "धर्म परिवर्तन" का नारा दिया। यह हवा भी ज्यादा दिन तक न चल सकी क्योंकि धर्म का सम्बन्ध कार्य से नहीं व्यवहार व व्यक्तित्त्व से होता है। बाबा साहेब ने संविधान का निर्माण किया तथा उसके उद्घाटन समारोह में बोलते हुए कहा कि "26 जनवरी, 1950 को राजनीति में हमारे देश के लोगों को समता प्राप्त हो रही है लेकिन सामाजिक और आर्थिक जीवन में विषमतायें बनी हुई हैं। हमें इस विसंगति को जल्दी से जल्दी समाप्त करना होगा अन्यथा जो लोग आज भी विषमता के शिकार हैं वे किसी दिन हमारे राजनैतिक लोकतंत्र की धज्जियाँ उड़ा देंगे।" उन्होंने देश के निर्बल वर्ग और दलितों की समस्याओं के समाधान के लिए अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा था - "दलित वर्गों की समस्या का निदान तब तक सम्भव नहीं है जब तक उसके हाथ में राजनैतिक सत्ता नहीं आएगी।[9]

आज उनके पास शिक्षा है आरक्षण भी है सत्ता भी है पर समस्त दलित वर्ग का उत्थान हो पाया? सभी आर्थिक रूप से सुदृढ़ हैं? सभी शिक्षित हो पाये? नहीं। सामान्य जनमानस व उनके मध्य दूरियाँ और बढ़ती जा रही हैं। यह भेदभाव उस समय खत्म होगा जब सभी के हृदय परिवर्तित होंगे वो हृदय चाहे सवर्ण के हों चाहे दलित के। यह परिवर्तन कान्ति से नहीं हो पायेगा और न सत्ता में आकर। इसलिए आज गाँधी एवं अम्बेडकर की प्रासंगिकता को नकारा नहीं जा सकता है। गाँधी हृदय से जो चाहते थे वे स्थितियाँ भारत में लगभग दिखने लग गयी हैं। भारत के सवर्ण हिन्दू एक दिन लोकतांत्रिक प्रणाली में दलितों के शासन को सहर्ष स्वीकार करने लगे हैं। धीरे-धीरे सवर्ण रूढ़िवादी हिन्दुओं का अंधकार हटेगा और दलितों को सम्मानजनक स्थिति प्राप्त होगी तभी दलितोत्थान यथार्थ रूप में ले सकेगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ:-

1. गाँधी, एच०बी०शारदा, दयानन्द कोमेमरेशन वाल्यूम, वैदिक मन्त्रालय, अजमेर
2. हरिजन, पृष्ठ 33ए 1934
3. दी लाइफ ऑफ महात्मा गाँधी- पृष्ठ 164
4. बी०आर०अम्बेडकर - व्हाट कांग्रेस एण्ड गांधी हैव इन टू, बम्बई
5. बी०आर०अम्बेडकर - "कास्ट इन इण्डिया"
6. साम्प्रदायिक पंचाट 16 अगस्त, 1932
7. आई०आर०टी०सी० - खण्ड-3, पृष्ठ 1385
8. डा० शैलेन्द्र पान्थरी महात्मा गाँधी और भारतीय स्वतंत्रता संग्राम
9. डॉ. चन्द्रजीत यादव - भारतीय समाज में दलित एवं कमजोर वर्ग की स्थिति